शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

यह सर्वज्ञात तथ्य है कि आगम-परम्परा और निगम- -भिन्न परम्परा है। आगम परम्परा की विचारधारा निगम-परम्परा के समानान्तर ही भारतवर्ष में अपनी न्यूनाधिक विशेषताओं के साथ चलती आई है। यद्यपि भ्रान्तिवश विद्वज्जन भी आगम-तन्त्र की धारा को पश्चाद्वर्ती मान लते हैं। यह भ्रान्ति वस्तुतः अज्ञानतावश है। भारत के प्राचीनतम् वाङ्मय वेद हैं, उनके समग्र पर ध्यान दें तो यह धारा निगम (वेद) के समानान्तर सूत्र-संकेत रूप में ही सही, निश्चय ही, विद्यमान रही है बल्कि आगम-तन्त्र के कतिपय तत्व तो पुरा-वैदिक सिद्ध हो सकते हैं। हाँ, अथर्वाङ्रिस-परम्परा अथवा भृग्वाङ्गिरा-परम्परा अर्थात् अथर्ववेद के अनेक सांस्कृतिक सूत्र प्राक् ऋग्वेदीय भी हो सकते हैं।[1]

आगम-तन्त्र की महत्ता का संकेत मात्र इस बात से ही मिल जाता है कि एक तरफ इस अति पुरातन परम्परा के लक्षण सुदूर अतीत काल से ही भारत से इसकी सीमा के बाहर अनेक देशों में फैलते रहे ओर मनीषियों के बीच संवाद, चिन्तन व प्रयोग के आधार बने तो आधुनिक युग में उन्नीसवीं शताब्दी से ही आगम-तन्त्र पर न केवल भारतीय विद्वान् अपितु पाश्चात्य मनीषी आकृष्ट हुए। भारत में तो इस धारा की महिमा कतिपय ऐसी विभूतियों द्वारा व्यक्त की गयी, जिनकी मनीषा स्थूल भौतिक ज्ञान से ऊपर परम् आध्यात्मिक भाव से अनुप्राणित थी। महामहोपाध्याय डॉ0 गोपीनाथ कविराज एक ऐसे ही सिद्धसाधक मनीषी थे। कविराज जी का कृतित्व आगम-तन्त्र-ज्ञान के सैद्धान्तिक विमर्श के लिए तो उपादेय है ही, उनकी स्वयं की सतत् साधना के विम्ब भी उनकी अभिव्यक्ति में अनुस्यूत हैं। इस महती परम्परा को हृदयङ्गम करने के लिए अन्ततः एक आधार अप्रतिम मनीषी ने भी दिया है कि इस धरा में गुरु का स्थान सर्वोपरि है-

किमत्र बहुनोक्तेन कोटिशास्त्रशतेन वा।
दुर्लभा चित्तविश्रान्तिर्विना गुरुकृपा पराम्।।

(अर्थात् अधिक कुछ कहने से क्या लाभ, कहने को तो करोड़ों शास्त्र हैं परन्तु चित्त को विश्रान्ति मिलती है गुरु-कृपा से ही ! और यह अनुकम्पा 'परा' अनुकम्पा है जो दुर्लभ है!!)

आगम-तन्त्र परम्परा को उपलक्षित करते हुए कहा जा सकता है कि ज्ञान का आधार-स्रोत शास्त्र नहीं अपितु ''गौरव'' है। गुरुत्त्व की इस महिमा का प्रथम संकेत भी वेदों में प्राप्त है। संहिताओं : मंत्रों-ब्राह्मणों में संभव है कि इस तरह के संकेत छान्दसी भाषा में व्यंजना में हों पर उत्तर-वैदिक वाङ्मय और वेदों के ज्ञान-काण्ड के प्रतिपादक उपनिषद् : श्वेताश्वतरोपनिषद् (6.23) का एक वचन इस सन्दर्भ में उद्धरणीय है -

यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।

यहाँ 'परा भक्ति' की चर्चा पहली बार हुई है और कहा गया है कि जैसी आस्था 'देव' में हो, वैसी ही 'गुरु' में भी होनी चाहिए।

सतत् गुरु-शिष्य-संवाद एवं गहन चिन्तन-विमर्श से सुदूर अतीत-काल से चली आ रही आगम-तन्त्र-परम्परा आध्यात्मिक ज्ञान के स्तर पर एक असाधारण चिन्तन-धारा है। इसके इतिवृत्त का रेखांकन यहाँ आवश्यक नहीं, प्रस्तुत टिप्पणी का प्रतिपाद्य है। वेदों में आगम-तन्त्र-परम्परा के सूत्र और इन सूत्रों के आधार पर यह स्वीकार करना समीचीन होगा कि- (1) वैदिक आर्यों की मुख्य धारा (निगम-परम्परा) के समानान्तर ही आगम-परम्परा भी प्राचीन भारतीय समाज में किसी न किसी रूप में अवश्य प्रचलित थी तथा (2) शास्त्रावरण और अध्याय (लोक-व्यवहार) के स्तर पर आगम-तन्त्रों का ऐतिहासिक युगों में जो उत्कर्ष या कि जो अभ्युदय-विकास हुआ, उसके प्राग्रूप, निश्चय ही, वेदों में ही प्राप्य हैं।[2]

ध्यातव्य है कि तन्त्रों की मूलभूत पाँच विशेषताएँ हैं- 1. यन्त्र, 2. मन्त्र, 3. मण्डल, 4. कुण्डलिनी-जागरण तथा 5. पंच मकार (मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा, मैथुन)। कहने की आवश्कता नहीं कि ये

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

तांत्रिक विशेषताएँ उपलक्षित हैं- ऐतिहासिक युगों में, ऐतिहासिक युगीन आगम-तन्त्र-परम्परा के अभ्युदय-विकास में, स्पष्टतः क्रमशः कुषाण, गुप्त-गुप्तोत्तर एवं पूर्व मध्ययुग में किं वा इन ऐतिहासिक काल-खण्डों के शिल्प में-साहित्य में, संगीत में, सर्वत्र यहाँ तक कि ब्राह्मण-परम्पराओं में भी- क्योंकि आगम-तन्त्र परम्परा का प्रभाव विराट् ब्रह्मवर्चस् की भाँति सर्वत्र ओर समस्त (जड़-चेतन) पर पड़ा। साक्षी है इतिहास! समग्र का मूल्यांकन करें तो इन युगों का इतिहास-बोध और तदनुरूप प्राचीन भारत का सांस्कृतिक इतिहास!

मेरा मंतव्य जुड़ा है उपर्युक्त विवेचन की पृष्ठभूमि से, स्पष्टतः वैदिक पृष्ठभूमि से जहाँ आगम-तन्त्र-परम्परा की सुविकसित विशेषताएँ ढूँढना अनावश्यक है और गलत भी- क्योंकि वेदों में अभिव्यक्त है भी तो इस महती परम्परा के कतिपय पक्ष, वह भी सूत्र-संकेत रूप में। उदाहरण के लिए उपर्युक्त मूल विशेषताओं में यन्त्र, मंत्र तथा पंच मकारों के सूत्र तो वेदों में उपलक्षित हैं और 'मण्डल' सम्बन्धी वैदिक सामग्री का संकलन और गहन विवेचन एक अलग एवं गम्भीर शोध का विषय है, किन्तु वेदों में 'कुण्डलिनी जागरण' के सिद्धान्त ढूँढना सूरज की रोशनी में चाँद की तलाश करना है।

इसके पूर्व कि हम उपलब्ध वैदिक साक्ष्यों के आलोक में आगम-तन्त्र-परम्परा के कतिपय पक्षों अर्थात् तत्कालीन तांत्रिक प्रवृत्तियों का निदर्शन करें, आगम-तन्त्रशास्त्र के एक पाश्चात्य मनीषी का सादर स्मरण करें- जिनके विशद एवं अप्रतिम कृतित्त्व ने लगभग एक शताब्दी पूर्व ही विश्वस्तरीय मनीषियों को चमत्कृत एवं अभिभूत कर दिया था। में उल्लेख करना चाहूँगा सर जॉन ऊड्रफ का, (जो 'आर्थर एवलान' नाम से भी सुविख्यात थे)। तन्त्रशास्त्र के अनेक ग्रन्थों के यशस्वी सम्पादक और सारे विश्व को आगम-परम्परा की महिमा से चकित कर देने वाले दर्जनों विशिष्ट ग्रन्थों के रचइता सर जॉन ऊड्रफ पहले प्राच्य विद्याविद् थे जिन्होंने 'तन्त्रशास्त्र एवं वेद' विषय पर सर्वप्रथम विचार किया और उसकी सारगर्भित व्याख्या की। एतद्विषयक उनके विचार-सूत्र तो उनके अनेक ग्रंथों में मिल सकते हैं, किन्तु उनकी महान् कृति 'शक्ति एण्ड शाक्त' में इन सूत्रों का किंचित् विस्तार है। यह कृति वस्तुतः ऊड्रफ के व्याख्यानों का संग्रह है। आड्यार मद्रास से सन् 1918 में पहली बार प्रकाशित इस ग्रन्थ के 1959 तक पाँच संस्करण छप चुके थे। सात सौ से अधिक पृष्ठों में इस बृहद् ग्रन्थ के चार खण्ड हैं और यदि इसके प्रथम खण्ड से तेहर परिच्छेदों पर दृष्टिपात करते हुए एक नाम दिया जाय तो मेरे विचार से यह होगा - भारत-धर्म और तन्त्रशास्त्र। 'भारत-धर्म' अंग्रेजी के इण्डियन-रेलिजन का अनुवाद नहीं, अपितु सर जॉन ऊड्रफ का ही दिया हुआ नाम है।[3]

सच बात तो यह है कि भारतीय तन्त्र-शान्त्र से जुड़कर, दो दशकों से अधिक समय तक अध्ययन-अनुसंधान-प्रकाशन करने के उपरान्त प्रौढ़ मनीषी ऊड्रफ के एतद्विषयक व्याख्यान जब 'शक्ति एण्ड शाक्त' शीर्षक से प्रकाशित हुए तो इसके संस्करण-दर संस्करण (तीन संस्करणों तक) उनके ही द्वारा संशोधित-परिवर्धित होते रहे, मनीषियों की प्रतिक्रिया से भी वे अवगत रहे। 'भारत-धर्म' नामकरण और अन्ततः अपने ग्रन्थ के आरंभिक 25 पृष्ठ इसी शीर्षक (इण्डियन रेलिजन एज भारत धर्म) में अंकित कर देने का उनका आशय विशेष था।[3] तन्त्रों की मूल स्रोत 'शक्ति' का मूलार्थ ऊड्रफ की दृष्टि में था 'विश्व-सामर्थ्य'! वेद अलग नहीं हैं, ऊड्रफ के विचार में आगम-तन्त्र से -किंवा आगम-तन्त्र वेद से! वेदों में तन्त्र-शास्त्र के सूत्र देखना इसीलिए सर्वथा प्रासंगिक एवं ज्ञान-सापेक्ष्य है।

मैंने प्रस्तुत विषय-संदर्भ में सर जॉन ऊड्रफ की एक कृति और उसके पहले ही परिच्छेद 'भारत-धर्म' की चर्चा इसलिए भी कर दी क्योंकि इसके पच्चीस पृष्ठ उन सभी की आँख खोलने वाले साबित हो सकते हैं जो 'परम्परा' के मर्म को जाने बिना अज्ञानतावश, भारतीय होकर भी भारतीयता को नकारते हैं और अपने कुतर्क से इसकी अभेदपरक समन्वित दृष्टि से वंचित रह जाते है। काश ! वे पृष्ठ राष्ट्रभाषा तथा अन्य सभी भारतीय भाषाओं में भी उपलब्ध हो जाते।

तन्त्रशास्त्र एवं वेद का क्या सम्बन्ध था, इसका निराकरण कुछ हद तक निश्चय ही हो सकता है वेदों में व्यक्त आगम-तन्त्र के कतिपय सूत्रों द्वारा ही।

यन्त्र

आगम-तन्त्रों में कुछ आकृतियों का विशेष महत्व है, जिन्हें कहा जाता है यंत्र। ये यंत्र विविध रूपों में हैं। विभिन्न प्रकारों एवं रूपों में विनिर्मित यन्त्रों के विविध उद्देश्य हैं। इनमें एक अत्यन्त लोकप्रिय है- वर्ग के

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

भीतर त्रिकोण । इसके ही शतपथ ब्राह्मण (VI.1.1.6) में कहा गया है अग्नि-क्षेत्र। ध्यान दें, वेदिका-निर्माण दोनों ही परम्पराओं में होता है। वैदिक और तांत्रिक दोनों ही परम्पराओं में वेदिका-निर्माण में पाँच पशुओं के शीर्ष के प्रयोग विहित हैं (विस्तार के लिए देखिये शतपथ ब्राह्मण VI.2.1.5-8)। वैदिक एवं तांत्रिक कर्मकाण्डों में अनेक बिन्दु हैं जो इन दोनों भिन्न धाराओं में अनोखे सादृश्य के बोधक हैं। यथा आगमों में 'लिंगम्' की उपासना का शास्त्रीय विधान है। इसके सूत्र वैदिक देवता 'विष्णु' में उपलक्षित हैं। जहाँ उन्हें कहा गया 'विष्णु शिपिविष्ट' (ऋग्वेद VII. 100.1 आदि)। क्या यह लिंगम् का प्रागरूप नहीं है? इसी तरह शतपथ ब्राह्मण में 'सार्पराज्ञी' का उल्लेख है। कहा गया है वाग्वै सार्पराज्ञी अर्थात् वाक् ही सार्पराज्ञी हैं ध्यान दें तन्त्रों की सार्पराज्ञी पर, तो क्या ऐसा नहीं लगता कि वैदिक 'सार्पराज्ञी' उसी का प्रागरूप है ?

तंत्रों में कहा गया है कि देवत्त्व की अनुभूति किसी भी पदार्थ में हो सकती है- यह अनुभूति केवल मंत्रों, यंत्रों, घंटों प्रतिमाओं अथवा पूजा के अन्य कर्मकाण्डीय तत्त्वों में ही नहीं।[4] कौलावलि तन्त्र में कहा गया है-

यंत्र मंत्रमयं प्रोक्तं देवतैव हि।
देहात्मनोर्यथा भेदो यन्त्रदेवतयोस्तथा।।

इस अभिव्यक्ति के अनुसार यंत्र 'शक्ति' का प्रतीकात्मक रेखांकन या कि आकृति रूप है। इसे प्राणवंत करते हैं मंत्र।

प्रतीकार्थ को समझें तो कुण्डलिनी-योग का स्मरण करें। सहस्रार में शिव-शक्ति-सम्मिलन तंत्रों के अनुसार साधक की समाधि का फलागम है। वेदों में 'शक्ति-शिव' के समन्वित रूप का संकेत अनेक पदों में अभिनिविष्ट है। उन पदों के विश्लेषण से अनायास ही इस टिप्पणी का विस्तार हो जायगा। अस्तु मैं ध्यानकृष्ट करता हूँ उन वैदिक वचनों पर जहाँ बार-बार कहा गया- 'त्वं स्त्री त्वं पुमान्' अथवा 'त्वं कुमार उत वा त्वं कुमारी'। तांत्रिक पद 'एवम्' क्या लाक्षणिक रूप से इन वचनों में प्रतिविम्बित नहीं है? यदि आप ऐतिहासिक लिपि ब्राह्मी के अक्षर 'ए' और 'व' (तथा)पर ध्यान दें और उन्हें मिला दें तो वह हो जाएगा एवम् - प्रतीकात्मक भाषा में अभिव्यक्त यह 'एवम्' क्या सुदूर अतीतकालीन यन्त्र नहीं? क्या प्रतीक-पूजा के पुरातन चिन्हों में 'योनि' एवं 'लिंग' का यह यन्त्रमय संयोग नहीं? वैदिक कर्मकाण्ड के विहित मंत्रों में विशषकर ब्राह्मण-ग्रंथों में इस संयोग को उपलक्षित करने वाले संदर्भों की वस्तुत: भरमान है।

जहाँ तक यंत्र की पवित्रता एवं महिमा की बात है, सर जॉन ऊड्रफ कहते हैं 'यंत्र' विभिन्न आड़ी-तिरछी या घुमावदार रेखाओं से बनाये जाते हैं और यंत्र को तंत्रों में मंत्र का शरीर माना जाता है।[6]

मंत्र

वैदिक एवं तांत्रिक दोनों ही परम्परा में कृत्यों का आरम्भ आचमन से होता है।[7] यह एक तरह की आत्म-शुद्धिकरण की क्रिया है। इसमें पवित्र जल से शरीर के कतिपय भागों का अभिसिंचन होता है। आत्म-शुद्धिकरण के इस कृत्य में कुछ बीज मंत्रों का उच्चारण किया जाता है।[8] आराधक प्रत्येक देव की अभ्यर्चना उसके विशिष्ट मंत्र से करता है।[9] तैत्तिरीय आरण्यक के परिशिष्ट भाग में ऐसे मंत्रों का संकलन है। इतना ही नहीं, तंत्रों की भाँति वेदों में भी अशुद्ध अस्तु अशुभ आत्माओं से मुक्ति हेतु कतिपय विशेष प्रकार की ध्वनियों के विधान हैं- यथा, खट् फट् हुम्।[10]

ऋग्वेदीय ऐतरेय ब्राह्मण (II.5.5) में कहा गया है कि प्रत्येक वर्ण (अक्षर) के लिए मंत्र में एक देव की अभिव्यक्ति है।

आचमन सम्बन्धी विधान एवं कृत्य और इसी तरह स्नान-विधि वेदों में वही हैं जो आगम-तंत्रों में भी प्रचलित रहे हैं। इस सन्दर्भ में महानिर्वाण-तन्त्र के पाँचवें अध्याय से गोभिल सूत्र की तुलना की जा सकती है।

सादृश्य 'ओंकार' में भी है। आगम-तन्त्रों में अभिव्यक्त और प्रचलित 'ओंकार' वेदों में अनेकत्र ध्वनित हैं। जहाँ ओऽम् को परम बीज-तत्व माना गया है। ओंकार की भाँति 'हिंकार' में भी समरूपता है। तन्त्रों में जो हिंकार है, वही वेदों में हुम् है! एक बात और तन्त्रों में वेदों की भाँति बड़े मंत्र-विधान नहीं हैं। सम्भवत: इसी विचार से मात्र एक 'अक्षर' के भी मंत्र होते हैं। एक अक्षर एक पद है।

आगम-तंत्र-परम्परा में देवत्त्व का मूल निहित है शक्ति में। उसे जगज्जननी या आम्बा शक्ति, कुछ भी

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

मान लें- यह पद 'शक्ति' वैदिक है और इसके मूलार्थ, जैसा कि इन पंक्तियों के लेखक ने अन्यत्र प्रकाशित किया है,[11] त्रिविध है- (1) प्रजनन या उत्पादन-सामर्थ्य, (2) मंत्र में निहित सामर्थ्य तथा (3) आमुध। यहाँ अभिप्रेत है दूसरा अर्थ, जिसकी अभिव्यंजना वेदों में प्रमाणित है । आर्थर एवलान (सर जॉन ऊड्रफ) ने 'शक्ति को मंत्रमयी शक्ति रूप में तन्त्रों ही नहीं वेदों में भी देखा है। इस सन्दर्भ में वे कुछ विशेष अथर्ववेदीय मंत्र भाग को तंत्रशास्त्र से सम्बद्ध मानते हैं। तंत्रशास्त्र का दूसरा नाम मंत्रशास्त्र भी है और मंत्र निश्चय ही एक गूढ़ पद है।[12]

पंच मकार : वैदिक सूत्र संकेत : कतिपय पक्ष

तंत्रों में पंचमकार है- मत्स्य, मांस, मुद्रा, मद्य और मैथुन। प्रथमत: इनमें अन्तिम दो के वैदिक सन्दर्भों की ओर ध्यानाकृष्ट करना समीचीन होगा।

१. मद्य

वैदिक आर्य अपने सोमयज्ञों और हविर्यज्ञों में मद्य का भी प्रयोग करते थे।[13] अनेक श्रौतसूत्र-ग्रन्थों में तथा शतपथ ब्राह्मण में ऐसे संकेत हैं। शतपथ ब्राह्मण (XII.1.16) में कहा गया है कि सुरा यज्ञकर्ता को परिशुद्ध करती है और वह स्वयमेय परिशुद्ध है। एक ऋग्वेद ऋषि कक्षीवान् सुरा के गीत गाते हैं। (ऋग्वेद I.116.7) अन्यत्र ऋग्वेद में ही कहा गया कि यह एक इच्छित वस्तु (X.107.9; VII.2.12)। शत0 (VI6.3.7) में सोम को कहा गया परमाहुति:। इतना तो क्या, सोम वहाँ अमृत तत्त्व है। देखें (IX.4.4.8)

अब प्रश्न यह है कि यह अमृत तत्त्व क्या है। 'मद्य' यदि शराब नहीं तो फिर वह कौन सा तत्त्व: द्रव्य या रसायन अथवा रसानुभूति है जिसे तांत्रिकों ने प्रतीक भाषा में मद्य नाम दिया है। तंत्रों में कहा गया है कि ब्रह्मरंध्र में जो सहस्रदल कमल है उससे चूने वाला जो अमृत है, उसी का नाम मद्य है।

व्यामपंङ्कजनि:स्यन्दसुधपानरतो नर:।
मधुपायी सम्य: प्रोक्त: इतरे मद्यपायिन:।।

उक्त गूढ़ार्थप्रकाश को दूसरे शब्दों में भी व्यक्त किया गया है। तद्नुसार उच्च साधना के बल पर जो साधक कुण्डलिनी तथा परम शिव के साथ सम्मिलित होने पर मस्तक में स्थिति इन्दु से चूने वाले अमृत का पान करता है उसी को तांत्रिक भाषा में 'मद्यप' कहते हैं- शराब पीने वालों को नहीं।

कुण्डल्याद् मिलनादिन्दो: स्रवते यत् परमृतम्।
पिबेत् योगी महेशानि ! सत्यं सत्यं वरानने।।

२. मैथुन

आगम तन्त्र में प्रचलित पंचमकारों में सर्वाधिक रहस्यपूर्ण वैशिष्ट्य मैथुन का है। स्थूल रूप में स्त्री-पुरुष के शारीरिक तादाम्य अथवा संभोग-क्रिया को मैथुन समझा जाता है। वे मिथुन (युगल) हैं अत: उनके सम्यक् योग (सं-योग) को मैथुन संज्ञा देना स्वाभाविक ही है। अज्ञानतावश अथवा तांत्रिक रहस्य को जाने बिना सामान्यता इस प्रक्रिया को स्थूल संभोग ही माना जायगा। इतना तो क्या, कतिपय ज्ञानी (तीक्ष्ण बुद्धि सम्पन्न) मनीषी भी अपने कौशल अथवा वाक्-जाल में जन-जन में अन्यर्थव्यावर्त्तक भाव ही जगाते हैं क्योंकि मूलार्थ के सम्प्रेषण की उनमें कोई निष्ठा नहीं। इतना तो क्या मिथक बनाकर ख्याति अर्जित करते हुए वे उत्तरआधुनिक भाषा में 'सेलेब्रिटी' तो बन जाते हैं पर यथार्थ-बोध से वे कोसों दूर हैं। आगम-तन्त्र परम्परा में अन्य जीवों की भाँति मनुष्य की 'प्रवृत्तिगत' विशेषता का अभिज्ञान है। वहाँ कहा गया -

न मांस भक्षणे दोषा, न मद्ये न च मैथुने।
प्रवृत्तिरेषा भूतानां निवृत्तिस्तु महाफला:।।

हाँ, माँस- भक्षण, मद्य-पान और स्त्री-सहवास, ये तो समस्त जीवों की प्रवृत्ति है- एषा भूतानां प्राणीनां प्रवृत्ति:। यदि इनसे 'निवृत्ति' हो तो फिर क्या कहने? वस्तुत: 'मनुष्य' समस्त प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है, इसलिए 'मनुष्य' से ही निवृत्तिभाव की अपेक्षा सम्भव है।

यहाँ यह भी जान लेना आवश्यक है कि आगम-तन्त्रों में 'मैथुन' का यथार्थ अभिप्राय क्या है? वहाँ सुषुम्ना और प्राण के समागम को तांत्रिक भाषा में मैथुन कहते हैं। यह अन्तर्योग और स्त्री-पुरुष-संयोग वस्तुत: बहिर्योग है- स्थूलत: भोग। जो सामान्य सुरति-क्रिया है, जिसमें स्त्री-सहवास से वीर्यपात् के समय जो सुख होता है या

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

कि जो सुखानुभूति होती है, उससे करोड़ों गुना आनन्द सुषुम्ना में प्राणवायु के स्थिति होने पर होता है। इसी को प्रकृत मैथुन कहते हैं ओर देवताओं ने इसी को 'सुरत' नाम दिया है।[14]

मेरु-तंत्र में कहा गया है -

इड़ापिङग्लयो: प्राणान् सुषुम्नायां प्रवर्त्तयेत्।
सुषुम्नां शक्तिरुद्दिष्टा जीवोऽयन्तु पर: शिव:।।
तयोस्तु संगमो देवै: सुरतं नाम कीर्त्तितम्।।

यज्ञ-कर्म वैदिक आर्य-परम्परा का केन्द्रीय बिन्दु है और सभी यज्ञ, वस्तुत: इस विचार पर आधृत हैं कि आध्यात्मिक आनन्द की ओर मिथुनीकरण ले जाता है ।[15] शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है-मिथुन अग्निहोत्र है।[16] शतपथ में कहा गया है कि यह कृथ्य रहस्यपूर्ण है। अत: यह गुह्य है।[17] अन्यत्र कहा गया कि एक अनुष्टुभ् के दो पद या चरण बेतरतीब ढंग से पढ़े जाते हैं।, जबकि दो अन्तिम इस तरह उच्चरित होते हैं मानों वे मैथुन-क्रिया का अनुकरण कर रहे हों। यह ऋग्वेदीय ऐतरेय ब्राह्मण का सन्दर्भ है।[18] ऐतरेय में ही कहा गया कि वे किसी एक स्त्री देवता की उपासना तब तक नहीं करते, जब तक कि वह देवी एक पुरुष देव के साथ जुड़ी न हो।[19] यह भी कि वे दो छन्दों का प्रयोग करते हैं- एक 'पुरुष' और दूसरा 'स्त्री' मानकर और दोनों के साथ-साथ उच्चारण को मैथुन माना जाता है। इस तरह का मैथुन-कर्म यज्ञ से अभिप्रेत फलागम प्रदान करता है।[20] ध्यातव्य है कि आहनस्या मंत्र का पाठ स्वर्ग प्रदान करने वाला कहा गया है।[21] इस तरह से मैथुन-कर्म अग्निहोत्रियों द्वारा सम्पादित होते थे। सर जॉन ऊड्फ का कहना है कि मैथुन कर्मकाण्ड धार्मिक कर्मकाण्ड थे।[22]

अन्य मकार

पंचमकारों में जो भी क्रम हो, हमने प्रथमत: 'मद्य' और 'मैथुन' जैसे दो मकारों का विश्लेषण इसलिए भी किया क्योंकि सामान्य ही नहीं, अपितु असामान्य व्यक्ति भी 'मद्य' और 'मैथुन' के स्थूल अर्थ में खो जाता है। जैसा कि हमने पहले ही संकेत किया- एषाभूतानां प्रवृत्ति:-क्योंकि यह प्राणिजगत् का स्वभाव ही है। अन्य मकारों में परिगणित हैं- मत्स्य, मांस ओर मुद्रा। अच्छा हो कि पहले हम इनके तांत्रिक अभिप्राय को समझ लें, फिर देखें कि वेदों में इनके सूत्र हैं या नहीं? ध्यातव्य है कि सभी मकार योग-साधना के तत्त्व हैं। साधना करने वाला ही साधक होता है- तंत्र की भाषा में भक्षक (भक्षण करने वाला या ग्रहण करने वाला)। ऊपर मद्य-साधक और मैथुन-साधक की चर्चा हुई और अब देखें कौन है मत्स्य-साधक, मांस-साधक और मुद्रा साधक?

३. मत्स्य

शरीर में इड़ा और पिंङ्ला नाड़ियों को तांत्रिक भाषा में गंगा और यमुना कहते हैं। इसके योग से सर्वदा प्रवाहित होने वाले श्वास और प्रश्वास (नि:श्वास) ही दो मत्स्य हैं। जो साधक प्राणयाम द्वारा श्वास बन्द करके कुम्भक द्वारा सुषुम्ना मार्ग में प्राण वायु का संचालन करता है, वही यथार्थ में मत्स्य-साधक (मत्स्य-भक्षक) है[23] - आगम-सार में कहा गया है कि -

गंगायमुनयोर्मध्ये मत्स्यौ द्वौ चरत: सदा।
तौ मत्स्यौ भक्षयेद्यस्तु स भवेद् मत्स्यसाधक:।।

कहने की आवश्यकता नहीं कि वेदों के ज्ञान-काण्ड उपनिषदों में प्राणोपासना के तत्त्व भरे पड़े हैं, बल्कि संहिताओं-ब्राह्मणों में भी इसके बीज प्रकीर्ण हैं।

४. मुद्रा

कितने ही शास्त्रोक्त सुभाषित-वचन उपलब्ध हैं, जिसके अनुसार सत्संग के प्रभाव से मुक्ति होती है ओर बुरी संगति से बन्धन होता है। तंत्रों के अनुसार असत्संगति के मुद्रण का ही नाम मुद्रा है।[24] अर्थात् बुरी संगति को छोड़कर सत्संगति को प्राप्त करना ही मुद्रा-साधन है:-

सत्संगेन भवेद् मुक्तिरसत्संगेषु बन्धनम्।
असत्संगमुद्रणं यत्तु तन्मुद्रा परिकीर्तिता।। (विजय तंत्र)

५. मांस

मांस और मांसाहार आगम-तन्त्र की परम्परा में एक विशिष्टार्थ की अभिव्यक्ति करने वाले पद हैं। कुलार्णव

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

तन्त्र में कहा गया है कि जो साधक पुण्य और पापरूपी पशुओं को ज्ञानरूपी खड्ग से मारता है अपने चित्त को ब्रह्म में लीन करता है, वहीं मांसाहारी है[25]-

पापपुण्यपशुं हत्त्वा ज्ञानखड्गेन योगवित्।
परे लयं नयेच्चित्तं मांसासी स निगद्यते।।

आगमसार में मांस साधक का परिचय इस प्रकार दिया है-

मा शब्दात् रसना ज्ञेया, तदंशान् रसनाप्रियान्।
सदा यो भक्षयेद् देवी, स एव मांससाधकः।।

अर्थात् जो व्यर्थ की बकवाद नहीं करता यानी अपनी वाणी पर संयम रखता है, वही सच्चा मांसाहारी है।[26] स्पष्ट है कि वाकसंयम साधना का एक प्रबल पक्ष है और वेदों में एक तरफ आर्यों की मूल धारा : निगम-परम्परा प्रवाहित है जहाँ याज्ञिक कर्मकाण्ड ही सब कुछ है, जिसमें पशुओं की ही नहीं, मनुष्यों की भी बलि का विधान था, दूसरी तरफ वेदों में यत्र-तत्र या प्रकीर्ण रूप में स्पष्ट संकेत इस बात के हैं कि आर्यों का ही एक वर्ग (विशेषत: कोशल-मगध के आर्यों) के बीच अहिंसामूलक सदाचार प्रचलित थे[27]- आगम-तंत्र-परंम्परा के बीज उन्हीं विचारों में अनुप्राणित हैं। विस्तारभय से यहाँ सूत्र-संकेत ही पर्याप्त हैं।

सन्दर्भ-

1. द्रष्टव्य, पाठक, विश्वम्भरशरण - ऐंसिएण्ट हिस्टोरिएन्स ऑफ इण्डिया, एशिया पब्लिसिंग हाउस, बम्बई, 1966; शर्मा, गोवर्धन राय-भारतीय संस्कृति : पुरातात्त्विक आधार, नेशनल पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 1985; तथा विस्तार के लिए द्र0 त्रिपाठी, माता प्रसाद : कोशल-मगध-क्षेत्र के पुरावैदिक सूत्र (विशेष व्याख्यान)-भारतीय इतिहास-लेखन समस्यायें एवं परिप्रेक्ष्य, सं0 अजय कुमार पाण्डेय, 2004
2. महामहोपाध्याय डॉ0 गोपीनाथ कविराज का समग्र कृतित्त्व ही पठनीय है- विशेषत: द्रष्टव्य : तांत्रिक वाङ्मय में शाक्त दृष्टि तथा भारतीय संस्कृति और साधना (दो भागों में)- सभी बिहार राष्ट्रभाषा प्रकाशन, पटना से प्रकाशित।
3. विस्तार के लिए द्रष्टव्य, सर जॉन ऊड्रफ : शक्ति एण्ड शाक्त, मद्रास (पाँचवाँ संस्करण), 1959
4. ऊड्रफ, तत्रैव, पृ0 490
5. तत्रैव, पृ0 490 एवं आगे।
6. तत्रैव, पृ0 131
7. गोभिल गृह्यसूत्र 1.2.5, तैत्तिरीय आरण्यक-II.11; महानिर्वाण तन्त्र, अध्याय-5;
8. ऐतरेय आरण्यक, II.2.1.2;II2.5.2;ऋग्विधान ब्राह्मण-II.16;
9. ऋग्वेद -III.62.10;
10. तैत्तिरीय आरण्यक IV.27; शतपथ ब्राह्मण I.5.2.-18; I.3.3.14; I7.2.11-14; I.7.2.21; XI.2.2.3 एवं 5; महानिर्वाण तन्त्र, अध्याय-3; अन्य प्रयोजनों के लिए द्रष्टव्य ऐतरेय ब्राह्मण II.3.6; तथा II.5.5
11. त्रिपाठी, माता प्रसाद : ऋग्वेद में शक्ति : विविध रूपों में प्रसार-अभिव्यक्ति ऋतावरी, अंक-4 (2003), गोरखपुर पृ0-1-13
12. ऊड्रफ के ग्रन्थ 'शक्ति एण्ड शाक्त' का चौबीसवाँ अध्याय, शक्ति एज मंत्र' के विश्लेषण हेतु 'मंत्रमयी शक्ति रूप में उद्घाटित है।
13. लाट्यायन श्रौतसूत्र, 5.4.11; कात्यायन श्रौतसूत्र, 19.1 शांखायन श्रौतसूत्र- 15.15; 24.13.4; शतपथ ब्राह्मण-5.1.2.12; 5. 1.5.28; 12.7.3.14 इत्यादि। आपस्तम्ब श्रौतसूत्र-18.1.9
14. द्रष्टव्य, उपाध्याय, आचार्य बलदेव- बौद्ध-दर्शन-मीमांसा, पृ0-315-317, चौखम्बा, वाराणसी, 1970
15. ऊड्रफ, तत्रैव पृ098 एवं आगे।
16. शतपथ ब्राह्मण-XI.6.2.10; शतपथ ब्राह्माण के कतिपय अन्य सन्दर्भ भी द्रष्टव्य है। यथा- III.2.1.2 आदि।
17. शतपथ ब्राह्मण, VI.5.3.5
18. ऐतरेय ब्राह्मण, II.5.3;
19. तत्रैव, III.5.4;
20. तत्रैव, V.3.1;
21. शाखायन श्रौतसूत्र, XII.24.1-10; अथर्ववेद, XX.136; ऐतरेय ब्राह्मण, VII. 2-9;
22. विस्तार के लिए द्रष्टव्य, शक्ति एण्ड शाक्त, पृ0-100
23. उपाध्याय, बलदेव, वही

SHODH SANCHAYAN

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

Bilingual journal of Humanities & Social Sciences

Half Yearly

Vol. 1, Issue 2, 15 July, 2010

वेदों में आगम-तंत्र-परम्परा के सूत्र

माता प्रसाद त्रिपाठी

अवकाशप्राप्त आचार्य एवं अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

www.shodh.net

24. तत्रैव।
25. तत्रैव।
26. तत्रैव उद्धृत।
27. पाठक, विश्वम्भरशरण- ब्राह्मण समाज: एक ऐतिहासिक अनुशीलन (लेखक-देवेन्द्रनाथ शुक्ल) की भूमिका।

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN